शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सम्पादकीय

भूमि समस्या और ग्रामदान विचार

डॉ.पुष्पेंद्र दुबे

केंद्र सरकार ने हाल ही में सामाजिक-आर्थिक और जातीय जनगणना 2011 की रिपोर्ट जारी की है। इसमें सरकार ने जातीय आंकड़ों को जारी नहीं किया है। लेकिन सामाजिक-आर्थिक जनगणना से ग्रामीण भारत की डरावनी तस्वीर उभर कर सामने आई है। इस जनगणना में पाया गया है कि प्रत्येक तीन में से एक परिवार भूमिहीन है और शारीरिक श्रम करके पेट भरते हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने देश के 640 जिलों में यह जनगणना की है। इसकी रिपोर्ट वित्त मंत्री अरुण जेटली और ग्रामीण विकास मंत्री बीरेंद्रसिंह ने जारी की। ग्रामीण भारत के 5.37 करोड़ अर्थात 29.97 फीसद परिवारों के पास कोई जमीन नहीं है। वे दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर हैं। गांवों में रहने वाले कुल परिवारों में से 2.37 करोड़ अर्थात् 13.25 फीसद के पास रहने को मात्र एक कमरे का मकान है, जिसकी दीवारें और छत कच्ची है। इसके अलावा 9.16 करोड़ परिवार श्रमिक हैं। यह गरीब भारत की वह तस्वीर है जिसे 'इंडिया' देखना भी नहीं चाहता है। आज भूमि समस्या इस देश के सामने मुंह बाये खड़ी है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों को उन्हीं की शर्तों पर उद्योग लगाने हेतु भूमि देने के लिए सरकार पलक पांवड़े बिछाए बैठी है। इसमें सरकार को 'मेक इन इंडिया' सरीखे नारे की सफलता दिखाई दे रही है तो दूसरी ओर करोड़ों लोगों के पास न तो रहने को मकान है और न खेती करने के लिए जमीन है। युग पुरुष विनोबा भावे ने अपने जमाने में ही इस सत्य का साक्षात्कार कर लिया था कि भारत देश और दुनिया की मूल समस्या भूमि है। यदि भारत में भूमि समस्या अहिंसा से हल होती है, तो उससे कुल दुनिया में शांति कायम होगी। इसलिए वे कहा करते थे कि भारत गुलाम गांवों का आजाद देश है। इस भूमि समस्या को हल करने के लिए विनोबा ने भूदान आंदोलन प्रारंभ किया। उन्होंने माना था कि हिंदुस्तान के भूमिहीनों की जमीन की भूख मिटाने के लिए पांच करोड़ एकड़ जमीन लगेगी। इस उद्देश्य को लेकर वे निकल पड़े और दुनिया के सामने भारत की दान परंपरा को अनूठे रूप में प्रस्तुत किया। पूंजीवाद में जो भूमि कानून से मिलती है, साम्यवाद में कत्ल से वही सर्वोदय में करुणा से मिल सकती है। इस प्रयोग को विनोबा ने सिद्ध किया। वे भूदान तक ही नहीं रुके बल्कि उसका अगला कदम उन्होंने ग्रामदान का उठाया और बाद में वे मालकियत विसर्जन तक गए। विनोबा के साथियों को लगा कि चींटी जैसी गति से तो भूमि और दूसरी समस्याओं को हल करने में सालों लग जाएंगे। हम अपने जीवन काल में ही पूरी क्रांति कर लें तो उचित होगा। फलस्वरूप प्रतिक्रांति की भूमिका तैयार हुई। समाज परिवर्तन की प्रक्रिया कुंठित होकर 'सरकार परिवर्तन' की ओर मुड़ गयी। तब से लेकर आज तक अनेक सरकारें बदल गयीं परंतु समस्याएं आज अपने सबसे निकृष्टतम रूप में मौजूद हैं। सभी रचनात्मक कार्यक्रम सरकाराभिमुख होकर जनता से दूर हो गए। आज समस्याओं को गिनाने वाले, उनका विश्लेषण करने वाले एक से एक बुद्धिजीवी मौजूद हैं, परंतु इनका समाधान कहीं दिखाई नहीं देता है। अधिकांश का चिंतन राजनीति और सत्ता सापेक्ष होने से वैचारिक शून्य उपस्थित हो गया है। आज यदि

सरकार भूमि अधिग्रहण कानून पारित करवाने के लिए ऐड़ी-चोटी का जोर लगा रही है, तब क्या ग्रामीणजन अपनी सारी जमीन ग्रामसभा के सुपुर्द कर निश्चिन्त हो सकते हैं ? यदि संसद कानून बनाकर भूमि को अधिग्रहीत कर सकती है तो क्या हमारी ग्रामसभा भूमि देने से इनकार करने का कानून नहीं बना सकती ? आज जनगणना ने ग्रामीण परिवेष की जो स्थिति हमारे सामने उपस्थित की है, वह अत्यंत चिंतनीय है। भूमि समस्या और प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार के विचार ने देश में हिंसात्मक वातावरण उपस्थित किया है। आँध्रप्रदेश के तेलंगाना में पोचमपल्ली की जिस हिंसा का समाधान विनोबा ने भूदान यज्ञ में तलाश किया था, वही स्थिति आज फिर देश के सामने नये रूप में उपस्थित है। तब से लेकर आज तक विज्ञान ने बहुत विकास किया है। विज्ञान युग में व्यक्गितगत मालकियत का विचार टिकने वाला नहीं है। आज जिस टेक्नालाजी ने केंद्रीकरण को बढावा देकर अपना गुलाम बनाया है, इसी टेक्नालाजी की मदद से ग्रामीणजन अपनी मुक्ति सिद्ध कर लेंगे। बस उनमें स्फुरण की जरूरत है। जिन लोगों को भरोसा नहीं था कि भारत देश आजाद हो सकता है, राजा-रजवाड़े खत्म हो सकते हैं, जमींदारी प्रथा जा सकती है, उन्हीं की आंखों के सामने यह सब घटित हुआ। वैसे ही जिन्हें यह भरोसा है कि वे इस देश के गांवों को गुलाम बनाकर रखेंगे वे बहुत बड़े भ्रम हैं। वे शीघ्र ही अपनी मुक्ति की ओर अग्रसर होंगे।